बांधो मत, गंगा को अविरल बहने दो – I

आज इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि हिंदुस्तान का पानी उतर गया है – पीने के पानी की किल्लत तो बच्चा–बच्चा महसूस कर रहा है, और आंख का पानी भी नहीं बचा, यह भी किसी से छिपा नहीं है। भौतिक पानी की कमी होने से शायद हमारी पानी की समझ भी कमतर हो गई है। हमारे समस्त शास्त्र और आख्यान प्रमाण हैं कि अभी एक डेढ़ सदी पहले तक हमारी पानी की समझ अत्यंत विस्तृत थी। मध्य काल में लोक भाषाओं का प्रचलन बढ़ने लगा तो हमारे मनीषियों ने जल के शास्त्रीय विवेचन को सरल लोकोक्तियों में प्रस्तुत कर दिया। रहीम का दोहा है :

रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून ।
पानी गए न ऊबरे, मोती मानस चून ।।

कबीर ने भी हमें याद दिलाया है :

माया महा ठगिनी मैं जानी,
केषव के कमला बनु बैठी,
षिव के भवन भवानी ।
पण्डा की मूरत बन बैठी,
तीरथ में भई पानी ।।

सच है कि कबीर जनवादी दार्षनिक हैं। उन्होंने दार्षनिक गूढ़ तत्वों को भी सहज कवित्त में इसीलिए कह दिया कि आम आदमी अपने दर्षन से अलग विलग न हो और उसका जीवन–दर्षन उसकी स्मृति में अंकित होगा तो वह आवष्यकता पड़ने पर अंतःकरण की बात को सहज जान भी लेगा। कबीर की इस बानी से यह सरल बात स्वतः स्पष्ट हो जाती है कि सृष्टि में समस्त माया पानी की है, ईष्वर के सभी रूप जल सदृष है, और जल की तीर्थ या तारनहार प्रवृत्ति ही ईष्वर रूप में पूजनीय है। ईष्वर जल की तरह अलग–अलग रुपों और रूपकों में हमारे समक्ष प्रत्यक्ष होता रहता है और आदमी ईष्वरीय तत्व जल से निर्मित स्वयं ईष्वर का रूप है। पानी के महत्व को छोटा मत जानिए।

रहीम की बात तो और भी सीधी और दो टूक है। अब्दुर्रहीम खानखाना प्रथम पीढी हिंदी–वासी हैं। उनके पिता बैरम खाँ तूर्क मूल के थे – हुमायुं, जब दुबारा लौटा तो उसके साथ हिंदुस्तान आए थे। ऐसा कहा जाता है कि रहीम हिंदी, संस्कृत, फारसी, अरबी, तुर्की आदि के विद्वान तो थे ही लेकिन विष्व की अनेक भाषाओं में संवाद कर सकते थे। ऊपर लिखे दोहे में रहीम ने न केवल हिंदू शास्त्र के तत्व को उद्‌भासित किया है बल्कि ऐसा सार्वभौम सत्य कहा है जो शाष्वत विद्या का द्योतक है।

'दुनियां में सब रौनक पानी की है – जहां पानी नहीं है वहां सून (षून्य) है। जो कौम अपना पानी नहीं बचा सकती, जिस कौम का पानी उतर जाए वह चमक खोए मोती की तरह है जिसका एक कौड़ी भी मूल्य नहीं। पानी की रक्षा मानव धर्म है।

हिंदुस्तान के पानी पर पिछले 150 बरस से लगातार हमला हो रहा हे, और हम बेखबर हैं। यह अत्यंत अषुभ लक्षण है। सन् 1850 के लगभग दिल्ली में डेढ़ दर्जन छोटी बड़ी स्थानीय या थोड़ी दूर से बह कर आने वाली बारहमासी नदियां प्रवाहित थीं। आज उन सभी की परिभाषा गंदा नाला है। आज दिल्ली हिमालय के पानी पर जिंदा है। लेकिन कब तक ? शायद हमें खबर नहीं हुई कि हिमालय तेजी से सूख रहा है – तब क्या होगा ? शायद : स्वयं को भगीरथ का अवतार कहलाने के लिए लालायित नेता यूरोप के आल्प्स का पानी हिंदुस्तान ले आने की योजना प्रस्तुत कर देंगे । और इस प्रक्रिया में आल्प्स भी सूख गया या दिल्ली की जमना की तरह मल मूत्र का पहाड़ बन गया ? तब तक तो सब कुछ बहुत आसान हो चुका होगा – तब तक साईंस की इतनी तरक्की हो चुकी होगी कि 'आकाष गंगा' (अंतरिक्ष) से घर तक सीधी पाईप लाईन से जुड़ी होगी ? और प्लास्टिक के नल से अमृत प्रवाहित हो रहा होगा । साईंस के गरुर में आदमी शैतानियत की हद लांघने लगा है।

इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि देष में पानी का 'गम्भीर' संकट है। इसी जलाभाव के स्थायी हल के लिए भारत सरकार ने प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी और राष्ट्रपति ऐ.पी. जे. अब्दुल कलाम की संयुक्त सहमति/युक्ति से एक छप्पन खरब रूप्ए की लागत से बनने वाली नदी–जोड़ो योजना प्रस्तुत की है। इस योजना पर नव–विष्व–कार्य–संस्कृति के तहत तत्काल ही युद्ध स्तर पर काम शुरू हो गया है। मानव इतिहास की विषालतम–योजना के कारण–परिणाम पर छिटपुट संवाद शुरू होने में भी अभी देर है लेकिन योजना पर काम दैविक गति से चलने लगा। यानि जब तक यह तर्क विकसित होगा कि अंततः योजना चलेगी नहीं और लाभ से बहुत अधिक नुकसान करेगी तब तक कुछ लाख करोड़ रूप्ए इस पर व्यय हो चुकेंगे और फिर योजना को पूरा करना ही तर्क–संगत होगा जैसा कि नर्मदा–सरदार सरोवर नदी घाटी योजना या टिहरी आदि के संबंध में हो रहा है। यह प्रष्न तो अपनी जगह है कि इतने व्यापक प्रभाव वाली योजना की एक 'प्रजातान्त्रिक' देष में बिना किसी पूछताछ के, सभी नियमों को ताक पर रख कर कैसे लागू किया जा सकता है ? हमें तो यह भी अनुमान नहीं कि साईंस–निष्ठ तकनीकी में हमारा भरोसा क्या कुछ नहीं करके दिखा सकता–आज हमें यह बात याद ही नहीं है कि इस देष में कुछ समय पूर्व तक गंगा–यमुना जैसी महानदियां अविरल बहा करती थीं।

पिछले दिनों गंगा की मूल धारा भागीरथी को टिहरी बांध में कैद कर दिया। सवा साल से केवल अलकनंदा और मंदाकिनी का जल ही गंगा में प्रवाहित हो रहा है – वह भी हरिद्वार तक। गंगा जी में तो आज ऋषिकेष और हरिद्वार से निकाली जाने वाली नहरों के लिए पर्याप्त पानी भी उपलब्ध

नहीं है। हिमालय से आने वाली बची खुची गंगा का तो हरिद्वार–कनखल में प्रवेष से पहले ही अस्तित्व शून्य हो जाता है। यह कैसी असाधारण घटना है कि 20वीं सदी के पूरा होते–होते गंगा का भागीरथी रूप ही समाप्त हो गया – न कोई प्रतिक्रिया हुई, न कोई चिंता, किसी किस्म की सांस्कृतिक धार्मिक पीड़ा का तो प्रष्न ही नहीं उठता।

पिछले शनिवार, दिनांक 17 मई 2003, को दिल्ली में तीन गैर–सरकारी संगठनों–टॉक्सिक लिंक, इकोलोजिकल फाऊंडेषन, तथा साऊथ एषिया नेटवर्क ऑन डैम्स, रिवर्स, एंड पिप्ल – द्वारा आयोजित एक नागरिक संगोष्ठी में प्रधानमंत्री द्वारा प्रस्तावित नदी जोड़ो योजना पर गंभीर चिंता व्यक्त की गई। इस विषय पर विस्तृत चर्चा हुई कि मानव इतिहास की विषालतम परियोजना का मुखर विरोध कैसे संगठित किया जाए। अन्तर–नदी–घाटी–जलान्तरण योजना के खिलाफ जन विरोध आयोजित करने की व्यापक चर्चा इस गोष्ठी में की गई। लेकिन इस विषय पर कोई चर्चा या जिक्र नहीं हुआ कि जिस हिंदू–भारतीय समाज में गंगा का अस्तित्व समाप्त कर देने पर कहीं कोई पीड़ा या आक्रोष नहीं है वहां अन्य नदियों के अस्तित्व पर कोई मामूली जनसंघर्ष भी कैसे आयोजित होगा ?

आखिर क्या वजह है कि हम साईंस और नव–साम्राज्यवाद के रिष्तों को देखने या समझने के लिए मानसिक रूप से तैयार ही नहीं हैं। आखिर पिछले 100–150 बरसों में हमें हुआ क्या है कि हम अपनी समस्याओं को लगातार सीमित दायरों में बांध कर उनके निराकरण के विषेषज्ञ बनते जा रहे हैं। वैष्वीकरण यानि नव–साम्राज्यवाद के युग में हमें हमारी समस्याओं के पारस्परिक सम्बन्ध दिखाई पड़ने लगातार बंद हो रहे हैं। कहीं ऐसा तो नहीं कि हमारे विरोध का स्त्रोत उसी फोर्ड फाऊंडेषन के कार्यालय में हो जहां स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू के लिए 'सामुदायिक विकास' और पंचवर्षीय योजना का प्रारूप विकसित किया गया था ?

सन् 1949–50 में मैं दर्जे पांच का छात्र था जब फिरंगी मेंमों ने हमें कोका कोला पीना सिखाया। वही समय था जब फोर्ड फाउन्डेशन के सौजन्य से अमेरिकी विशेषज्ञों ने हमारी पंचवर्षीय योजनाओं का ढांचा निर्धारित किया। हमें विद्युत ऊर्जा से रेल चलानी सिखाई। दामोदर नदी घाटी की पनबिजली योजना के फेल हो जाने पर वहां भाप–विद्युत–उद्योग का रास्ता दिखाया। यह सिद्धान्त प्रतिपादित करके सिखाया कि साईन्स द्वारा पैदा की गई समस्याओं का समाधान साईन्स ही कर सकती है। इसमें ज़रा भी आश्चर्य नहीं कि हमारे देश की बहुतांश सियासी ताकतें और लगभग समूचा 'शिक्षित' वर्ग गोरे फिरंगी की गुलामी में अपने आप को धन्य समझता है।

हिंदू जाति या हिंदुस्तानी समाज का दुनियां में किसी से भी वैसा कोई वैर नहीं है जैसा कि इसाईयत और इसलामियत के बीच आजकल माना जा रहा है। लेकिन फिरंगी 'सभ्यता' हिंदू की कौम से डरती भी है। और इसे हज़म भी कर लेना चाहती है। 'हिंदू गांधी' की कौम पूरी दुनिया के लिए –

विशेषतः फिरंगी 'सभ्यता' के लिए एक अजूबा रहस्य है। यह दुनियां की अकेली कौम है जो न तो विस्तारवाद में विश्वास रखती है न धर्म परिवर्तन में – क्रिस्तानी अथवा टोडी हिंदू की बात थोड़ी दीगर है, क्योंकि वह एक कृत्रिम प्रजाति है। इस सबके बावजूद हिंदू समाज का आदर्श या राम राज्य की कल्पना एक अबूझ रहस्य बना हुआ है। पिछले पचास बरस से अमेरिकी 'सभ्यता संगठन या गिरोह' हिंदुस्तान के तिलस्म को तहस नहस कर इसे अपना क्रीत दास बना लेना चाहता है। 'दासत्व, दासता' अमेरिकी 'सभ्यता' का विशेष स्वभाव है। आधुनिक अमेरिका की कुल संरचना दास–व्यवस्था की बुनियाद पर खड़ी है। और किसी न किसी रूप में वर्तमान विश्व व्यवस्था की मालिक है। इस परिस्थिति में हिंदुस्तान पर कब्जे की चाहत एक सहज बाल–सुलभ आचरण है। इसमें आष्चर्य जैसा कुछ नहीं। दो सौ बरस से यह प्रमाणित सत्य है कि जो हिंदुस्तान पर राज करता है वही दुनिया का बादषाह कहलाता है। पता नहीं कि हमारे अपने नेता इस सत्य के तत्व से अनजान क्यों हैं ? चक्रवर्ती सम्राट बनने से क्यों डरते हैं ?

भौतिकवादी दृष्टि से एक महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि हिंदुस्तान वही देश है जिसे विलायती लूट के पहले 18वीं सदी तक सोने की चिड़िया कहा जाता था। पूरी दुनिया के लिए यह बड़ा असमंजस है कि इस भूभाग में खान तो न सोने की है न हीरे जवाहरात की और न तेल, कोयले की – लेकिन फिर भी इस देश में दुनिया का सर्वाधिक सोना होने का अनुमान है। फिरंगी द्वारा लूट खसोट शुरू हुई उसके पहले तो यह अकूत धन संपदा और विशाल विस्तृत वैभव का देश था ही। एक छोटे से टापू राज को 'ग्रेट ब्रिटेन' का दर्जा हिंदुस्तान को गुलाम बना कर ही मिला था। ब्रिटिश औद्योगिक क्रांति का सूत्रपात भी हिंदुस्तान की लूट और बाज़ार के आधार पर ही निर्मित हो सका। आश्चर्य ही है कि मार्क्स भी इस तथ्य को समझ नहीं सके कि दुनिया में औद्योगिक क्रांति और प्रथम या मौलिक पूंजीवाद का विकास सिर्फ इंग्लैंड में ही हुआ – उपनिवेष तो अनेक थे – आधी से ज्यादा दुनिया कालोनी ही थी – मगर हिंदुस्तान सिर्फ एक था। यह विचारणीय मुद्दा है कि औद्योगिक क्रांति ने स्पेन, पोर्चुगाल, जर्मनी, फ्रांस, हालैंड में से किसी को भी नहीं चुना। इतिहास की समस्त कृपा सिर्फ इग्लैंड पर ही हो गई ?

हिंदुस्तानी अजूबे के एक पहलू को अमेरिकी कृषि साइंटिस्टों ने किसी हद तक पहचान लिया है। अनेक आधुनिक विशेषज्ञों का मानना है कि हिंदुस्तान की नदी घाटियों में, वादियों और चरागाहों में अकूत खाद्य पदार्थ, डेरी उत्पादन, एवं जीवनोपयोगी वस्तुएं जैसे कपड़ा, कागज, लकड़ी, घास, मिट्टी से बनायी उपयोगी वस्तुएं पैदा की जा सकती है। पिछली सदी के छठे–सातवे दशक में तीन पश्चिमी विशेषज्ञों – डा. पी. बरिंघ (क्तण् च्य ठनततपदह), डा. एच.डी. वान हीम्स्ट (क्तण् भ्यक्ण् टंद भ्ममउेज) एवं डा. जी.जे. स्टारिंग (क्तण् ळण्श्रण ैजंतपदह) ने अलग–अलग यह अनुमान लगाया था कि भारत की उत्पादकता लगभग 300–400 करोड़ टन अन्न के समकक्ष है – यानी अकेला हिंदुस्तान पूरी दुनिया के लिए पर्याप्त एवं उत्तम गुणों के खाद्यान्न की पूर्ति कर सकता है।

मध्य एशिया में पाए जाने वाले खनिज तेल आदि का पता और उपयोग तो बीसवीं सदी की खोज है। भारत की उत्पादकता, क्षमता, संस्कृति, सामाजिक व्यवस्था आदि तो अजस्र सोतकी तरह अनादि हैं। अंग्रेज़ों ने नासमझी और राक्षसी स्वभाव के वशीभूत जो लूटपाट की शोषण व्यवस्था कायम की उसमें स्वदेशी व्यवस्थाएं छिन्न–भिन्न हो गई और दुर्भिक्ष आदि का स्थायित्व दिखाई देने लगा। आजादी के तुरन्त बाद के विकट समय में सन् 1950–60 के दशकों में अमेरिकी नीतिज्ञों को विश्वास था कि हिंदुस्तान की समूची व्यवस्था पर पी.एल. 480 के माध्यम से काबिज हो जाएंगे। प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने अमेरिका के सहयोग से 'हरित क्रांति' का नारा लगाया और पी.एल. 480 की योजना को ध्वस्त कर दिया। यह कोई साधारण उपलब्धि नहीं थी।

अमेरीकन नीति विचारकों ने हरित क्रांति को ही अपना औजार बना लिया, तो प्रत्युत्तर में अगले बीस बरसों में हिंदी किसान ने स्वयंमेव भारतीय पारंपरिक कृषि के प्रयोग शुरू कर दिए – आज किसान नेता चौधरी महेन्द्र सिंह टिकैत के घर में खेती के लिए एक दर्जन से ज्यादा गाय–बैल मौजूद हैं। ट्रैक्टर का उपयोग यातायात के साधन तक सीमित है। गंगा जमुना के दोआब में तो अनेक छोटे–बड़े किसानों को यह तथ्य समझ में आ गया है कि गन्ना और चावल की खेती लाभ का धंधा नहीं है। आज देश भर में हजारों लाखों किसान निजी स्तर पर तरह–तरह के प्रयोग कर रहे हैं। लेकिन इन पचास बरसों में हमारे देश का शहरी शिक्षित तबका, अग्रणी समाज नेता, राजनीतिज्ञ, नौकरशाह, आधुनिक साईंटिस्ट–टेक्नोक्रैट आदि पश्चिमी सभ्यता के गुलाम बन गए हैं। इनमें जो नेक, ईमानदार और राष्ट्रभक्त आदि है उनके भी सोचने समझने का तरीका वही है जो अमेरिका के साधारण जन का है। जो तन, मन, धन से गुलाम हैं वह तो उस खेमें में शामिल रहते ही हैं। लेकिन जो आधुनिकतावादी राष्ट्रप्रेमी है उनका भी विश्वदृष्टिकोण अमेरिकी सहज बुद्धि मनस से कुछ भिन्न नहीं। यही वजह है कि हिंदुस्तान में, आई.आई.टी. जैसे संस्थान और सरदार सरोवर और टिहरी बांध जैसी राष्ट्र विरोधी योजनाएं लागू होती रहती हैं। आधुनिकतावादी पाठक के लिए आई.आईटी. के मुद्दे को स्पष्ट कर देना जरूरी है। यह जानकर किसी को आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि पांचों आई.आई.टी. संस्थानों के 95 प्रतिशत स्नातक तो अमेरिका की सेवा करने चले जाते हैं, जो पांच प्रतिशत हिंदुस्तान में बच जाते हैं वह या तो साबून बेचते हैं, या मुनीमी या बाबुगिरी करते हैं। प्रतिभा पलायन (ब्रेनड्रेन) पर फैशनेबुल चर्चा तो चार दशक से चल रही है लेकिन सत्य का सामना करने से हमें काफी डर लगता है। प्रतिभा निर्माण क्या और कैसे हो और किसके लिए हो – इस विषय पर हमारे आधुनिकतावादी नेतृत्व को विचार करना ही नहीं आता। देष में संपूर्ण रोजगार नहीं होगा तो जनता को बहलाने के लिए नदियों को जोड़ना ही पड़ेगा।

गौर तलब परिस्थिति है कि गंगा जमना का दोआब दुनियां की सर्वोत्तम ज़मीन है – इस क्षेत्र का किसान पिछले 30 बरस से दरिद्रता के दुष्चक्र में उलझता जा रहा है। महेन्द्र सिंह टिकैत के नेतृत्व

में इस क्षेत्र का किसान पिछले पन्द्रह बरस से लगातार गुहार कर रहा है कि उसकी समस्याओं को समझने और निराकरण का प्रयास किया जाए – लेकिन हमारे पास कोई समझ आज उपलब्ध नहीं है कि आधुनिक या साईंटिफिक कृषि के विकास के साथ–साथ अलाभकार जोत का विकास क्यों हो रहा है ? किसान की समस्याओं को समझे बिना तो पानी पर कोई संवाद संभव दिखाई नहीं पड़ता। नहर+ट्रैक्टर+हरित क्रान्ति के विषिष्ट/संयुक्त प्रभावों का अध्ययन किसानों के अनुभव से सीखना होगा। उनके सुख–दुःख से जुड़ कर ही उस सत्य को तलाषना होगा जिसके आधार पर भारत सरकार की सन्मति की राह चलने की सद्बुद्धि जागृत की जा सकेगी।

'विकास या विनाष' के हर प्रस्ताव में अमेरिकी षडयंत्र का दर्षन करना अपने आप में स्वस्थ परम्परा नहीं है। यह सहज संभव है कि विष्व इतिहास में अनोखा भगीरथ बनने की महत्वकांक्षा और उसके लिए भारत की नदी–घाटी–जलान्तरण की विषालतम योजना को साकार करने का सपना प्रधानमंत्री वाजपेयी ने स्वयं ही देखा हो। हमें यह कदापि नहीं भूलना चाहिए कि आधुनिक भारत के निर्माता–स्वप्नदृष्टा जवाहरलाल नेहरू ही अटल जी के रॉल मौडल हैं। इस बात को वह सिर्फ व्यक्तिगत स्तर पर ही नहीं कहते बल्कि सार्वजनिक तौर पर भी बार–बार दोहराते रहते हैं। यह सत्य दृष्टि ओझल नहीं होना चाहिए कि संजय एवं राजीव गांधी द्वारा प्रस्तावित समस्त योजनाओं और कल्पनाओं को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ नेतृत्व की वर्तमान सरकार ने निष्ठापूर्वक अभूतपूर्व सक्रियता से लागू किया है। आज उस मानस के सूक्ष्म विष्लेषण की आवष्यकता है जिसके प्रभाव वष हिंद देष की पवित्र गंगा को सहज ही नष्ट–भ्रष्ट किया जा सकता है।

यहां यह याद दिलाना जरूरी है कि 18वीं सदी तक हिंदुस्तान सोने की चिड़िया क्यों कहलाता था। लोक विद्याओं की विषद परंपरा तो अपनी जगह है ही लेकिन इस देश की सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्कृति और कर्मकांड मिट्टी, पानी और वनस्पति से जुड़े हुए हैं। भारत देश में समाज, सभ्यता, संस्कृति और अकूत संपदा का निर्माण जल–जंगल–ज़मीन के वैदिक विज्ञान को विस्तार देकर ही हुआ था। आज भी इससे अतिरिक्त दूसरा रास्ता नहीं। हिंदुस्तान की एक–डेढ अरब जनता को स्वच्छ जल उपलब्ध कराना स्वछन्द नदी की अविरलता के स्थायीकरण से ही संभव होगा। किसी भी अन्य रीति से इतने व्यापक स्तर पर निर्मल जल व्यवस्था असंभव है।

भारतीय धर्म व्यवस्था में सरस, निर्मल, पतित पावन जल की अजस्र धारा को ही सरस्वती कहा गया है। सरस्वती की वैदिक स्तुति में यह स्पष्ट है कि निर्मल जल समस्त जीवन, मानव एवं सृष्टि की स्मृति, विद्या, स्वास्थ्य, स्फूर्ति आदि का कारक स्रोत है। सरस्वती का मूल अर्थ ही निर्मल जल की अजस्र धारा है। यही अजस्र धारा शास्त्रीय स्मृतिकार है, एवं समस्त विद्या की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती भी है। यह अनुभव जन्य सिद्धांत है – निर्मल जल के दर्शन/स्पर्श से स्फूर्ति एवं चेतना स्वतः प्रवर्त होती हैं।

जलोपचार की पद्धति न आश्चर्य है, न चमत्कार – जल की सहज प्रवृति है। जल की किसी भी अजस्र धारा में सरस्वती की अंतरधारा सदैव विद्यमान है – प्रवाहित है।

सरस्वती की सगी बहन लक्ष्मी भी जल, जलचर और उसके शब्द से उत्पन्न माया की पर्याय है – उससे किसी भी स्तर पर भिन्न नहीं। लक्ष्मी रूप जल ही माया है। महानदी गंगा ही लक्ष्मी का मूर्त रूप हैं। हिंदू जो विशुद्ध उच्चारण में सिंधु है वह भी जल की प्रवृतियों और चरित्र का पर्याय है। हिंदी, हिंदू, इन्दै, इंडिया, इन्दस यह सभी शब्द सिंधु के विदेषी पर्याय हैं। सिंधु की वृहद परिभाषा वाल्मीकी रामायण में उपलब्ध है। राम जब सीता की खोज में समुद्र के पार वाली लंका में जाना चाहते हैं। तब सिंधु–राम संवाद होता है जो अपने आप में पर्यावरण शास्त्र का मौलिक आख्यान है। यह बात ठीक–ठीक ज़हन में उतार लेनी चाहिए कि जितना लौकिक (मबनसंत) फ्रैंच का इंदै, इंग्लिश का इंडियन – इंडिया है उतना ही सहज, स्वाभाविक और लौकिक अरबी–फारसी का हिंदी–हिंदू है। हिंद, हिंदी, हिंदू का मूल अरबी–फारसी में है। हिंदी–हिंदू संस्कृत से उत्पन्न नहीं। देखा जाए तो 'हिंदुत्व' (हिंदू+तत्व) शब्द या मुहावरे की रचना ही दोषपूर्ण है। शब्द चलन में आ गया तो भी इसकी ठेकेदारी ढोंगी हिंदुत्ववादियों को नहीं सौंपी जा सकती। लेकिन इन टोड़ी (नकली) हिंदुत्ववादियों को यह बात अवश्य समझ लेनी चाहिए कि अरबी भाषा के हिंदू और संस्कृत के 'स्थान' को जोड़ कर हिंदु–स्थान + जैसा संयुक्त/तत्सम रूप बन भी सकता कि नहीं? वह चाहें तो अपने देष का नाम सिंधू+स्थान रख सकते हैं – हिंदू के साथ तो अरबी का स्तान ही जोड़ना पड़ेगा।

दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य जो सर्वदा याद रखना होगा कि हिंदुस्तान की समस्त आर्थिक, सामाजिक व्यवस्था की संरचना मिट्टी, पानी और वनस्पति की ईश्वर–सदृश पूजा, आराधना में निहित है। जल, मिट्टी और वनस्पति से संबंधित विद्या को तीर्थ विज्ञान भी कहते हैं। इसी तीर्थ विज्ञान का एक महत्वपूर्ण भौतिक पक्ष यह है कि भारत की सजलता और जलवायु की आद्रता अनेक स्थानीय विशिष्टताएं – जिनमें थार मरूस्थल जैसे सूखे पर्यावरण भी सम्मिलित हैं – मिल कर निर्मित करती हैं। भारत का मानसून एक ऐसी संपूर्ण जल–चक्र की व्यवस्था है जिसमें 100 मिली मीटर वर्षा वाले जैसलमेर से लेकर 12000 मिली मीटर वाला चेरापूंजी सम्मिलित था (आज तो हमने आधुनिक साईंस के गरुर में इस व्यवस्था को नष्ट कर दिया है)। लेकिन आधुनिक साईन्स में यह क्षमता नहीं है कि वह यह निर्धारित कर सके कि अचानक आषाढ (मध्य मई के लगभग) में क्यों तो यह समुद्री हवाएं हिंद महासागर में उठती है फिर 2000 मील लम्बे हिमालय, हिंदुकुश तक फैल जाती हैं और फिर 60 से 100 दिन तक कहीं कम कहीं ज्यादा बरसती रहती है, छिटपुट बरसात करती अरब की खाड़ी तक चली जाती हैं – फिर वहां से एकदम शुष्क होकर लौटती हैं, लेकिन हिंदुस्तान पहुंचते–पहुंचते इतनी नमी धारण कर लेती कि हिमालय में बर्फ बरसाती, उत्तरी भारत में सर्दी की मावट करती और फिर बंगाल की खाड़ी से प्रचुर मात्रा में जल उठा कर पूर्वी दक्षिण भारत में वर्षा आयोजित करती?। प्रकृति की इस अत्यंत गूढ

एवं रहस्यमयी व्यवस्था को बनाए रखने के लिए लाखो–करोड़ों बरसों के अनुभव जन्य ज्ञान से जो सामंजस्य भारतीय समाज ने स्थापित किया था उसी समस्त विद्या को इस देश में तीर्थ विज्ञान कहा गया। साईन्स के प्रभाव वष तीर्थ विज्ञान विस्मृत हो गया है यह बात आसानी से समझ में नहीं आती है।

तीर्थ विज्ञान की मान्यतानुसार जैसे भूलोक समुद्रवसना है ठीक वैसे ही ब्रह्मांड भी जलयुक्त है। इसीलिए हिंदू शास्त्र में ब्रह्मांड को आकाश गंगा कहा गया है। समस्त जल अंतरिक्ष में निर्मित जीवन तत्व है, इसीलिए ईश्वर रूप है। जल की पवित्रता का यही आधार है कि उसकी नियमित आपूर्ति द्युलोक से होती है – इसीलिए समस्त जल पूजनीय है और समस्त नदियां गंगा रूप हैं। वैदिक संस्कृति का पालन करने वाले भारत देश में जलयुक्त प्रत्येक स्थान (घर परिवार में घड़ा/कलश रखने के स्थान से लेकर कुंड, कुएं, जोहड़, बावडी, तालाब, नदी, नालों और समुद्र के किनारों तक) पवित्र तीर्थ हैं। अपने देष में एक नहीं सैकड़ों गंगा है। समस्त पवित्र जल देव लोक से आता है और देवलोक को जाता है। लेकिन जहां साईंटिस्ट जल–संवाद की शुरूआत इस तथ्य से करते हों कि कितना पानी समुद्र में व्यर्थ जा रहा है – प्यासी धरती को सजल बनाने के लिए इसका उपयोग तो होना ही चाहिए वहां के साईंटिफिक टेम्पर को तो ठीक से समझना पड़ेगा। साईंसनिष्ठ सुधारवादियों का भी इन विषयों पर कोई ध्यान नहीं जाता। जल संरक्षण का नारा सहज भाव से लगाया जाता है, लेकिन भारत जैसे देष में डेल्टा और ड्रैनेज की आवष्यकता पर कही बहस ही नहीं – समुद्र के हक की चर्चा न तो एस.एम. कृष्णा करते हैं, न जयललिता। आष्चर्यजनक यह है कि नर्मदा बचाओ संग्राम की सेना नायक मेधा पाटकर भी अरब सागर के अधिकारों के लिए बिल्कुल आवाज़ नहीं उठाती।

समस्त संस्कारों और शुभ कार्यों में जल यानी वरूण देव की साक्षी अनिवार्य है क्योंकि जल की स्मृति दोष रहित है – वरूण सृष्टि के आदि स्मृतिकार हैं। आधुनिक साईंटिस्ट यदि गणितज्ञ–प्रतिमान (डंजीमउंजपबंस डवकमस) के आधार पर पृथ्वी पर उपलब्ध पवित्र–शुद्ध जल की गणना का प्रयास करेंगे तो बड़ी आसानी से यह बात समझ जाएंगे कि निर्मल जल का स्रोत अंतरिक्ष में स्थित है। पृथ्वी के जलवायु का स्रोत अंतरिक्ष–स्थित न होता तो 20वीं सदी में प्रदूषण का स्तर कहां तक गिर जाता इसका अनुमान भी संभव नहीं। यह सहज स्वभाविक है कि जल को ईश्वर मानने वाले देश में समस्त नदियां गंगा का प्रतिरूप है और महानदी गंगा की तरह आराध्य मातृ–देव रूप में प्रतिष्ठित हैं। गंगा माता अपनी अनेक विलक्षणताओं के कारण पृथ्वी पर समस्त जल और जलधाराओं का पूंजीभूत रूप है – वही नर्मदा है, वही कावेरी, वही ब्रह्मपुत्र है, वही गोदावरी। भारतीय धर्म संस्कृति में भौतिक जीवन और अध्यात्म में अभेद है, गंगा इसी अभेद का मूर्तिमान रूप है। गंगा नदी की अवधारणा में अध्यात्म और भौतिकता/एहिकता शिव–पार्वती की तरह, राम और सीता की तरह, राधा और कृष्ण की तरह अभिन्न हैं। गंगा एवं समस्त नदियों की भौतिक पवित्रता उनकी तथा समाज की आध्यात्मिक चेतना और पूण्य

भावना को बनाए रखने के लिए अनिवार्य है, ठीक उसी तरह जैसे कि गंगा और समस्त जल धाराओं की आध्यात्मिक शक्ति समाज एवं जल की भौतिक निर्मलता के लिए आवश्यक है। भौतिक और अध्यात्म की यह अभिन्नता उस त्रिवेणी सभ्यता (गंगा+यमुना+सरस्वती) की प्रतीक है जिसकी अनुपालना के फलस्वरूप भारत भूमि को आज से 300 बरस पूर्व तक सोने की चिड़िया कहा जाता था। हमारी विस्मृति ही हमारे दारिद्रय भाव का कारण और लक्षण है।

आज सिर्फ हिंदुस्तान ही नहीं बल्कि दुनिया के प्रत्येक इंसान को यह तथ्य ठीक से समझ लेना होगा कि नवसाम्राज्यवाद की कार्यसूची में हिंदुस्तानी सोने की चिड़िया की गुलामी सर्वोपरि प्राथमिकता है। अकेला हिंदुस्तान दुनिया की भूख का निवारण कर सकता है और शिक्षा, स्वास्थ्य आदि के लिए भी पर्याप्त सेवाएं उपलब्ध करा सकता है – यानी जब तक हिंदुस्तान की प्राकृतिक क्षमता और आध्यात्मिक चेतना शेष हैं तब तक समूची दुनिया को एकमुश्त गुलाम बनाना संभव नहीं। इसलिए इस बार हमला हिंदुस्तान के मिट्टी और पानी के खिलाफ है। छप्पन खरब रुपए की लागत वाली विषालतम 'नदी–जोड़ो' योजना बनाई गई है। चाहे जिसने बनाई हो, यह योजना भारत की समस्त नदियों के विनाश की योजना है। इस योजना के माध्यम से समस्त नदी प्रणाली का विनाश हो जाएगा जैसा कि गंगा का हुआ है, और जो पानी विशाल बांधो में नियंत्रित होगा उस पर उन देषों या कंपनियों का कब्जा होगा जो उसके निर्माण की लागत जुटाएंगी और भारत के नागरिक और किसान को एक–एक बूंद पानी खरीदना पड़ेगा। क्रमषः

भाग दो

जल को अविरल बहने दो !

भारतीय मानसून में सूक्ष्मा–ति–सूक्ष्म स्थानीय परिस्थितिकी ;उपबतव.मबवे.चमबपपिबपजलद्ध समग्र मानसून चक्र की सूत्रबद्ध कड़ी है। उपलब्ध आद्रता/षुष्कता ;उवपेजनतम तमहपउमद्ध के यथोचित सदुपयोग का विधान है। उससे अन्यथा छेड़–छाड़ की अनुमति नहीं। पष्चिमी राजस्थान की कहावत है कि मारवाड़ में बारिष गऊओं के भाग की होती है – यानि कम वर्षा के क्षेत्र में कृषि का विस्तार करेंगे तो पर्यावरण की अपूरणीय हानि हो सकती है। किसी भी पर्यावरणीय क्षेत्र में अनियमित छेड़–छाड़ समस्त मानसून प्रणाली के चक्र को बाधित करती है।

प्रकृति ने कम–ज्यादा, ठंडा–गर्म, गीला–सूखा आदि की जो व्यवस्थाएं कायम की हैं – इन्सान को उन सीमाओं में रह कर ही जीवन प्रणाली आयोजित करनी होगी। प्रकृति से यह मांग नहीं की जा सकती कि वह कन्याकुमारी में भी माऊंट एवरेस्ट की हवा चलाए या गोआ में कष्मीर का मौसम उपलब्ध करवाए – इसी तरह यह मांग भी अवैज्ञानिक है कि दिल्ली की प्यास बुझाने के लिए हिमालय का पानी उपलब्ध करवाया जाए। आधुनिक साईन्स की आंतरिक नैतिकता पर चिंतन की शुरूआत अभी हुई नहीं है – क्या सचमुच हमें यह नहीं मालूम की समूचे हिंदुस्तान में समान आद्रता ;नदपवितउ उवपेजनतम तमहपउमद्ध की इच्छा का स्रोत कौन सी ज्ञान मिमांसा से उपजता है? ऐसी वैचारिक सादगी आधुनिक साईंस में ही संभव है – साईंटिस्ट राष्ट्रपति ने इस सादगी को मूर्त रूप में व्यक्त किया है । उच्चतम न्यायालय तो सिर्फ आधुनिकता के वषीभूत है।

प्रकृति में विविधता और वैविध्य का विधान – नियम क्यों बना – इस सूत्र पर आधुनिक विमर्ष अत्यंत अल्प और अपर्याप्त है। इस नियमावली से परिचय सिर्फ हिंदू कर्म कांड के माध्यम से ही सीखा जा सकता है। क्पअमतेपजल और ठपव.कपअमतेपजल पर चर्चा तो दस बीस बरस से जरूर होने लगी है लेकिन आधुनिक साईंस वैविध्य विज्ञान की पर्याप्त समझ से सदियां दूर है। दरअसल सरल बात ही कठिन पहेली होती है। युगों पूर्व यह सत्य कहा गया था – बहता पानी निर्मला – यानि पानी का परिषोधन – आक्सीजनीकरण जल और वायु के गतिषील घर्षण से होता है – इसी सरल अनुभव के आधार पर तीर्थ विज्ञान का यह विधान विकसित हुआ कि नदियों का वेगवती रूप अक्षुण्ण बनाए रखना अनिवार्य है। महाभारत के शांती पर्व में भीष्म पितामह ने युधिष्ठिर को उपदेष सुनाया है : इत्येता सरितः राजन् समाख्याता यथास्मृति ।। (हे राजन। भूमि का जन्म नदियों की कोख से होता है – इनके समकक्ष कल्याण दायी दूसरा नहीं है – नदियों की समुचित रक्षा राजा का धर्म है। नव–हिंदुत्व में यह परिभाषा अवष्य बदल जाएगी। नव हिंदुत्व तो प्रतिज्ञा कर चुका है वह नदियों को जोड़ देगा।

अंतरिक्ष में उत्पन्न जीवन तत्व सर्वत्र उपलब्ध है – ग्रहण करने के लिए उपयुक्त पात्र की समझ होनी आवष्यक है। उत्तम श्रेणी का गेहुँ तो ओस की सिंचाई पर ही निर्भर है। इसी कृषि शास्त्र का नाम हिंदू–धर्म है। नदियां हिंदू धर्म की अंतरधारा हैं। अरण्य–आधारित ऋषिकृषि धार्मिक कर्मकांड है।

नदी–जोड़ो योजना की प्रस्तावित या अनुमानित लागत 56 खरब आंकी गई है वह योजना पूरी होते होते 300 खरब तक पहुंच जाएगी – यह तथ्य पिछले पचास बरस के अनुभव पर आधारित है। इस कुल व्यय में से पांच–दस खरब रुपया उन राजनेताओं, नौकरशाहों और साईंटिस्टों को मिल जाएगा जो इस योजना को लागू करवाने में सहयोग कर रहे हैं। यह मामूली दलाली नही है। यह दलाली दो अरब डालर से ऊपर बैठती है। किंतु हिंदुस्तान की ज़मीन और तहज़ीब को गिरवी रखने के लिए यह रक़म सचमुच बहुत छोटी है। यह एक ऐसी योजना है जिस पर साईंटिफिक समाजवादी, अन्य इहलोकवादी, तरह–तरह के अनुदारवादी और नव हिंदुत्व वादी एकमत है। कहीं कोई मतभेद नहीं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ परिवार के सभी सदस्य संगठन संकल्प बद्ध है कि वह इस योजना को टिहरी बांध की तरह सफल बनाएंगे। आधुनिक साईंस वादियों में एक तबका सुधार–वादियों का है – उनका विष्वास है कि साईंस का दुरूप्योग, व्यक्तिवादी विकृति है और सच्ची साईंस के प्रचार–प्रसार से इसमें सुधार किया जा सकता है। कुछ लोग यह भी मानते हैं कि साईंस की समस्याएं साईंस स्वयं दुरूस्त करेगी। इस मुद्दे पर विचार से पहले इस योजना की कुछ विषेषताओं को सूचीबद्ध करने का प्रयास करना होगा।

1. इस नदी जोड़ो योजना का प्रारूप वर्तमान में किसी इंजीनियर या तकनीकी आयोग द्वारा प्रस्तावित नहीं किया गया है।

2. सन् 1990–91 तक इस संदर्भ में जो छिटपुट योजनाएं प्रस्तावित की गई वह विशिष्ट समितियों द्वारा खारिज करार दी गई थी।

3. एकाध–एकाध नदी पर बांध बनाने की योजनाएं तो 150 बरस से बन रही है और लागू भी की जा रही हैं। लेकिन समस्त जलधाराओं के विनाश की योजना पहली बार प्रस्तावित हुई और बिना किसी पूर्व चेतावनी के आनन–फानन में लागू कर दी गई।

4. देश के प्रधानमंत्री ने अचानक योजना को कार्यान्वित करने की घोषणा की और बिना किसी प्रारूप के इस पर नई विष्व व्यवस्था के अनुरूप काम शुरू करवा दिया।

5. भारत सरकार–प्रशासन का कोई विभाग यह बताने में असमर्थ है कि प्रधानमंत्री को यह योजना किसने सुझाई और 56 खरब की अनुमानित लागत का ब्यौरा क्या है और यह अनुमान किस विभाग या किस संस्था ने बनाया है।

6. केन्द्रीय विद्युत प्राधिकरण (विद्युत योजनाओं के संबंध में नीति बनाने वाला विभाग) को आज तक यह संज्ञान नहीं है कि इस योजना में कितनी बिजली लगेगी और कितनी बनेगी। विद्युत विभाग की तो मामूली बात है – योजना आयोग को भी इस योजना की कोई जानकारी नहीं है।

7. योजना के प्रेरणा स्रोत प्रधानमंत्री हैं। योजना को साईंटिस्ट राष्ट्रपति का आशीर्वाद है – योजना के किसी प्रारूप की जानकारी उन्हें भी नहीं है। क्यों कि आज तक ऐसा विधिवत प्रारूप बनाया ही नहीं गया। साईंस के सपने उसकी नैतिकता से सम्बद्ध होते है या नहीं – साईंस और साईंसनिष्ठ विकास का कोई इतिहास है या नहीं ? साईंटिस्ट राष्ट्रपति को उस इतिहास का ज्ञान है या नहीं ? यह स्वाभाविक है कि योजना के सम्बन्ध में ऐसे प्रष्नों को प्रजातंत्र और संवैधानिक पद की अवमानना ही माना जाएगा।

8. योजना का संचालन प्रधानमंत्री कार्यालय कर रहा है। योजना की क्रियान्विती में अन्य किसी मंत्रालय की कोई भागीदारी नहीं है। विशेष टास्क फोर्स यानी विशेष कार्य समुह बनाया गया है – कार्य समुह के नेता को मंत्रीपद का दर्जा हासिल है लेकिन निर्णय इत्यादि में संपूर्ण जिम्मेदारी, जवाबदारी प्रधानमंत्री कार्यालय की है।

इस कार्य–प्रणाली–संस्कृति के तहत कार्य समुह/गुट प्रधानमंत्री कार्यालय द्वारा जारी किए गए आदेशों की अनुपालना करेगा और मध्यस्थ–अभिकरण की तरह आदेशित योजनाओं को प्रस्तुत भी करेगा और प्रधानमंत्री के आदेशानुसार राष्ट्रीय अंतराष्ट्रीय ठेकेदारों को काम आवंटित करेगा। यही गिरोह/नेता प्रदेष सरकारों से संवाद–समझौता भी करेगा।

9. योजना पर राष्ट्रीय सहमति का काम योजना लागू होने के बाद शुरू किया जाएगा। यानी विशाल बांध तो हर प्रांत स्वेच्छा से बंधवा लेगा – उसके बाद, जल के बंटवारे पर सहमति हो या न हो। क्योंकि इस संदर्भ में कोई सहज सिद्धान्त या प्राकृतिक व्यवस्था तो उपलब्ध नहीं है – स्वभाविक है कि एक नदी घाटी से दूसरी नदी घाटी में जलान्तरण के नियम नहीं बनाए जा सकते। केवल पानी का मूल्य निर्धारित किया जा सकता है।

10. योजना का कोई सुनिश्चित नक्शा आज उपलब्ध नहीं, लेकिन जिन जल–विशेषज्ञों ने पिछले 40 बरसों में दस्तूर साहब की माला – नहर योजना और के.एल. राव की गंगा–कावेरी लिंक योजना को समझने का प्रयास किया है उनका अनुमान है कि अब परिवर्तित विशाल महत्त्वोन्मादी योजना यदि अंततः आधी अधूरी भी लागू हो गई तो न्यूनतम तीस लाख परिवारों को उजाड़ना होगा।

11. योजना का केवल सूक्ष्मांश मानव श्रम पर व्यय होगा क्यों कि संपूर्ण योजना आधुनिकतम तंत्र–यंत्र और मंत्र प्रणाली से निर्मित की जाएगी ताकि संपूर्ण योजना को पंद्रह बरस से काफी कम समय में पूरा कर लिया जाए।

12. विस्थापितों या अन्य योजना–प्रभावित पीड़ितों को किसी भी तरह की कानूनी राहत की सुविधा उपलब्ध नहीं होगी चूंकि योजना सुप्रीम कोर्ट के निर्देश के अंतर्गत राष्ट्रीय–अनिवार्य जन हित में लागू की जा रही है।

यह सहज स्पष्ट है कि इस योजना की विशेषताओं–विशिष्टताओं की सूची हनुमान जी की पूंछ की तरह विशाल है और इसी लिए योजना की पूर्ण निर्मिती समाप्ती तक इस योजना का प्रारूप या उसके प्रभाव या हानि–लाभ का लेखा प्रस्तुत नहीं किया जाएगा – सुप्रीम कोर्ट का आदेश स्पष्ट है : योजना का लोकहित में लागू किया जाना अनिवार्य है। यानी यह योजना ठीक उसी तरह लागू की जाएगी जैसे कि 'विश्व शांति के 'हित' में इराक के विरूद्ध युद्ध किया गया। इराक़ की और हमारी परिस्थिति में एक महत्वपूर्ण भेद या अंतर यह कि भारत की बर्वादी की योजना बनाने, प्रस्तावित करने आदि का श्रेय पूर्णतः स्वदेशी होगा केवल योजना के निर्माणकर्ता बहुराष्ट्रीय संस्थान होंगे, यानी जो उधार उपलब्ध कराया जाएगा उसमें सिर्फ दलाली हमें मिलेगी – या हमारे खाते में अमेरिका और स्विटजरलैंड आदि में जमा करवा दी जाएगी – सब काम वैसी ही सुरूचिपूर्ण–कार्य–संस्कृति से होगा जैसे कि दिल्ली मेट्रो का चल रहा है, जो ज़मीन उपलब्ध करायी गई है, वह और उस समस्त मेट्रो संपति पर कब्जा उन विदेशी संस्थाओं का होगा जिनने इस मेट्रो का निर्माण किया है या पैसा उधार दिया है। भारत देश की नदियों पर जो विशाल जलाशय बनेंगे उनकी मालिकी उन्हीं संस्थाओं की होगी जो उनकी लागत का ऋण उपलब्ध करा रही हैं या कराएगीं।

कृषि के लिए कोई लिफ्ट कनेाल आज तक सफल नहीं हुई – किन्तु शहरी जल पूर्ति के लिए इस तरह की योजनाओं का छोटा मोटा उपयोग हो ही जाता है। वही सफलता इस योजना की भी होगी।

हिंदुस्तान में दो–चार नहीं दस–बीस हजार लौकिक विद्वान आज अवश्य मौजूद हैं जो इस 'उन्मादी महत्वकांक्षा' के हानि–लाभ की विस्तृत एवं सटीक व्याख्या प्रस्तुत कर सकते हैं, कर भी रहे हैं। कोसी, नर्मदा, टिहरी, भाखरा–नंगल, दामोदर घाटी, सोन–पम्प नहर – और इन सबसे सौ सवा सौ बरस पहले निर्मित केनाल कालोनीज़ – स्यालकोट, मोन्टागोमरी, और दूर न जाएं – गंगा–यमुना के नहरी क्षेत्र का ही अध्ययन देख लें। विश्वभर में सैकड़ों अनुभवों की विस्तृत एवं अधिकृत रपटें उपलब्ध हैं और देखी जा सकती है। जिस टैनिसी वैली विकास परियोजना के आधार पर समस्त विश्व में 'नहरी–आधुनिक–पूंजीवादी कृषि, जल, विद्युत–उद्योग' की परंपरा का विकास हुआ, वह समस्त योजना

खारिज की जा चुकी है। एक दशक से तो टैनिसी वैली योजना को उखाड़ने की तकनीकी और योजना पर काम भी हो रहा है। अलवर जिले में 1992 की बाढ़ का प्रोफेसर गुरुदास अग्रवाल का अध्ययन उपलब्ध है। लेकिन उन्हीं के गुरु डा. सिंह का कहना है कोई वैज्ञानिक–इंजीनियर बांधो का विरोध कैसे कर सकता है ?

बिहार, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, हिमालय आदि में जो संषर्घ कोशी, गंगा, नर्मदा, टिहरी आदि के विरोध में साथी अनिल प्रकाश, इंजीनियर डी.के. मिश्रा, मेधावी बहन मेधा पाटकर, सुंदरलाल बहुगुणा, पांडुरंग हेगड़े, आदि के नेतृत्व में पिछले डेढ़–दो दशक से चल रहे हैं उनकी जानकारी भी पूरे देश को है।

विकल्प के संदर्भ में सवाल उठता है तो भाई अनुपम मिश्र की पुस्तक 'आज भी खरे है तालाब' के साथ–साथ मैग्सैसे एवार्डी राजेन्द्र सिंह और उनके संगठन–तरूण भारत संघ–द्वारा किया गया राजस्थान के सरिस्का और थाना गाज़ी क्षेत्र प्रयोग और उसकी सफलता हमारे सामने है। हिमालय में भारती के दूधातोली प्रयोग की सफलता भी असाधारण है।

विचारणीय मुद्दा यह है कि इन प्रयोगों और समस्त आंदोलनों की सम्मिलित ऊर्जा आज तक के संदर्भ में आवष्यक सुधार के लिए अपर्याप्त सिद्ध है। पहला महत्वपूर्ण तथ्य यही है कि हम ठीक से यह जान लें, समझ लें, विचार विमर्श कर लें कि बांध–नहर–जल–विद्युल और नहरी खेती की बाढ़ को रोकने के लिए हमारे अभी तक के आधुनिक लौकिकतावादी प्रयास अत्यंत अल्प एवं अपर्याप्त क्यों है ?

सन् 1850 के आसपास तक दिल्ली क्षेत्र में अरावली श्रंखला के पूर्व में माल रोड सिरे से तुग़लकाबाद छोर तक लगभग डेढ़ दर्जन सरस्वतियां प्रवाहित होती थीं – यह कहां लुप्त हो गई – पष्चिमी ढाल का पानी भी शायद नजफगढ़ धारा से दिल्ली पहुंचता था – इस सब पानी का अब क्या होता है ? गंगा–यमुना का तो अस्तित्व ही नहीं बचा। सवाल यही है कि साईंसनिष्ठ सुधार वादियों को इस इतिहास की समझ क्यों नहीं है? इन एतिहासिक समस्याओं के कारण निवारण का सिद्धान्त कैसे और किन मान्यताओं के आधार पर विकसित होगा ? इस प्रष्न का उत्तर तो देना ही पड़ेगा कि हिमालय और गंगा के सूखने का आधुनिक साईंस से सम्बन्ध है या नहीं। साईंस की विकास धारा में सूधार का आंदोलन 100 बरस पुराना तो जरूर है – लेकिन यह तथ्य तो सिरे से भूला दिया गया है कि दिल्ली की 18 नदियां और 18000 कुएं, बावडियां, ताल, तलैया कब और कहां लुप्त हो गए ? साईंस का विचार शुद्ध ज्ञान की पद्धति है या सपनों की भूल–भुलैया जिसमें गंगा, जमुना जैसी विषाल नदियों के खो जाने की भनक भी सुनाई नहीं पड़ी। भूल का मूल इसी तत्व में निहित है कि साईंस प्रचुरता से बहुत अधिक उत्पादकता ;च्तवउपेम वि उवतम जींद चसमदजलद्ध के वायदे पर टिकी है। साईंस के इस वायदे का सत्य परखा जाएगा तो साईन्स और आधुनिकता का आधार ही खिसक जाएगा, क्योंकि मानवता तो न्याय के

सिद्धान्त पर खड़ी होती है और साईन्सनिष्ठ आधुनिकता का न्याय तो प्रचुरता के वायदे में समाहित है उसकी अन्य कोई नैतिकता नहीं है। एटम बंब का निर्माण इस सत्य का प्रमाण है।

दिल्ली में 25 से 40 ईंच (600 मि.मि. से 1000 मि.मि.) बरसात होती है दिल्ली–अरावली का क्षेत्रफल 100 वर्ग किलोमीटर के लगभग है – इस विषाल स्रोत के सूख जाने का कोई वैचारिक धरातल है या नहीं ? इसलिए पहला कदम यही है कि लौकिकतावादी साईंटिफिक परंपरा का व्यापक विस्तार हो – इस सुझाव का गंभीरता से अध्ययन करना होगा कि वैदिक विज्ञानवादी परंपरा (जिसकी छिटपुट चर्चा इस आलेख की बुनावट में की गई है) को एक नई–स्वदेशी आधुनिकता का आधार बनाया जा सकता है या नहीं। एक महत्वपूर्ण विचारणीय मुद्दा यह भी है कि क्या हम लोक विवेक–आधारित संस्कारनिष्ठ विज्ञान की मान्यताओं (रूढि इत्यादि) से जुड़े बिना इस देष की बहुतायत आबादी से संवाद कर सकेंगे ?

इससे आगे बढ़ कर इस मुद्दे पर भी विमर्श खड़ा करना होगा कि हिंदी, हिंद, हिंदू की विशाल, विस्तृत और लंबी परंपरा में आध्यात्मिक–चेतना–शक्ति, भक्ति, प्रेम, आध्यात्मिक विद्रोह, सर्वधर्म समान भावना, सत्याग्रह, असहयोग, स्वदेशी आंदोलनों की संस्थाएं जो सदैव से उपलब्ध हैं उनका वर्तमान परिस्थिति में उपयोग और विस्तार संभव है या नहीं ?

हिंदू या हिंद–स्वराज के नाम से महात्मा गांधी द्वारा जारी एक घोषणा पत्र भी उपलब्ध है। घोषणा पत्र का जिक्र हुआ तो याद आया कि 1857 में हिंदुस्तान के अनेक राजा महाराजाओं ने शहंशाह बहादुर शाह ज़फर के नेतृत्व में भी दो घोषणा पत्र जारी किए थे और सिक्ख गुरुओं की परंपरा में एक बरसों चलने वाली लड़ाई का सूत्रपात किया था। वह एक असाधारण युद्ध था। उसका स्वाद चख लेने के बाद ही श्वेत फिरंगी ने हिंदी–हिंदू को 'गोरा' जैसा 'सभ्य' बनाने का संकल्प त्याग दिया था और सौ–दो सौ बरस में हिंदुस्तान से अपना विस्तर बोरिया समेट लेने का मन बना लिया था (फिलिफ मैसन – दी मैन हु रूल्ड इंडिया)।

जिस समय पूरा बंगाल 19वीं सदी के उतरार्ध में पष्चिम की हवा में बहा जा रहा था तो स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने अध्यात्म की शक्ति चेतना का व्यापक प्रयोग किया था। नाना पेशवा, बहादुरशाह ज़फर, रानी लक्ष्मीबाई, स्वामी रामकृष्ण परमहंस, गांधी के वंशजों ने इन समृद्ध परंपराओं का विद्रुपीकरण भी किया है वह भी हमारे सामने हैं। इसलिए विस्तार से यह समझना होगा कि इस परम्परा को पुनः समृद्ध करने की क्या प्रक्रिया होगी।

संक्षेप में गोरे फिरंगी साम्राज्यवाद के विरूद्ध लंबी चली पहली लड़ाई (1857 से 1947) का अनुभव हमारे पास है। सन् 1947 में हिंदुस्तान आजाद हुआ तो पूरी दुनियां में साम्राज्यवाद की शिकस्त

हो गई थी। वह शिकस्त आधी–अधूरी सिद्ध हुई क्यों कि हमने महात्मा के घोषणा पत्र को ही भूला दिया। क्या उस घोषणा पत्र को लागू किया जा सकता है ?

पानी की समस्या जल संरक्षण की नहीं हिंदुस्तान के ड्रनेज के समुचित उद्धार की है। ड्रेनेज का सम्बंध सिर्फ नदियों के प्रवाह सेनहीं है बल्कि भूजल के सही/उचित स्तर से भी है। भारत में भूजल प्रबंधन के लिए देष भर में लगभग 25 लाख तालाब, बावडियां, झील कुण्ड आदि की व्यवस्था थी। आज यह समस्त व्यवस्था नष्ट भ्रष्ट है। अधिकांष तालाबों के जमीन पर आम जनता का कब्जा है। उनके घर हैं या कोई सड़क जैसा लोक उपक्रम निर्मित हो गया है। इनमें से कुछ कब्जे विषिष्ट जन के भी हैं। किसी को भी सहज भाव से बेघर करना आसान नहीं होगा। सुप्रीम कोर्ट आदेष जारी कर सकता है – लेकिन अपने आदेष को लागू नहीं कर सकता। ऐसे न्यायपूर्ण आदेष को जबरिया लागू करवा भी दिया तो समाज में बड़ी टूट हो जाएगी। फिर स्वयं सरकार द्वारा ड्रैनेज को अत्यंत व्यापक स्तर पर अवरुद्ध किए जाने की समस्या भी हमारे सामने हैं। भाखरा, टिहरी और सरदार सरोबर को तोड़ने के लिए कौन राजी हो जाएगा ? इन सबको तोड़ेगे नहीं तो हिंदू सभ्यता का क्या होगा ? हिंदू की नदी गंगा माता ही नहीं होगी तो हिंदू के लिए 'स्थान' कहां होगा। 'हिंदुस्थान' जब भी बनेगा वहां गंगा नहीं होगी यह निर्णय तो संघ परिवार ने स्पष्ट कर दिया है। किसी तरह भी समस्या पर विचार करें आध्यात्मिक चेतना के अतिरिक्त अन्य कोई रास्ता उपलब्ध नहीं है। आध्यात्मिक शक्ति के माध्यम से तो यह प्रयास किया जा सकता है कि गंगा मां सभी को 'सद्बुद्धि का वरदान दे। व्यक्ति/समुह/संस्था चाहे इधर हों या उधर हों – सभी को दुराग्रह से मुक्त करे।' जो योद्धा अध्यात्म बल से परिपूर्ण होते हैं, वही अंतिम प्राण तक संग्राम में डट पाते हैं। अध्यात्मिक चेतना होगी तो संवाद होगा वर्ना हुज्जत के अलावा और कुछ न होगा।

नव साम्राज्यवाद के खिलाफ लड़ाई उन्हीं हथियारों से लड़ी जानी है जिनका विकास हिंदुस्तान में 1857 से 1947 के बीच हुआ है। स्वामी रामकृष्ण परमहंस और मोहनदास कर्मचंद गांधी के संयुक्त घोषणा पत्र और रण कौशल में वह अनोखी सामर्थ्य दिखाई पड़ती है जिसके बलबूते साम्राज्यवादी घोड़े की लगाम पकड़ कर उसका मुख उसके अपने घर की तरफ मोड़ा जा सकता है।

इस संग्राम का प्रथम युद्ध क्षेत्र गंगा जमुना का दोआब है। साईंसवाद ने गंगा जमुना पर गंभीर हमला बोला है। इस हमले का माकूल जवाब देकर ही साईंस साम्राज्यवाद के विरूद्ध मुक्ति संग्राम की शुरूआत की जा सकती है। पहला कदम अध्यात्म चेतना का है – पहली जून से पन्द्रह जून तक हरिद्वार में 'गंगा पुनर–अवतरण यज्ञ' का आयोजन किया जा रहा है। प्रयास होगा इस समस्त क्षेत्र के गांव–गांव, कस्बे–कस्बे, नगर–नगर 'गंगा यज्ञ समिति' गठित हों और गंगा की शुद्धि और शक्ति जागरण के लिए आध्यात्मिक यज्ञ शुरू करें। अपने स्थानीय क्षेत्र की समस्त जल संस्थाओं (तालाब, कुएं, कुंड आदि) का पुनरनिर्माण शुरू करें। 15 अगस्त 2003 तक जनजागरण की यह स्थिति होनी चाहिए

कि जिस बेला लाल किले की प्राचीर पर प्रधानमंत्री राष्ट्रीय तिरंगे को सलामी दे उसी बेला लाल किले के पिछवाड़े यमुना की सूखी तलहटी में दिल्ली से देहरादून तक के पांच लाख किसान एकत्रित हों और महारानी लक्ष्मीबाई, नाना साहब पेशवा और बहादुरशाह ज़फर की स्मृति में तिरंगा अवरोहण के साथ–साथ प्रतिज्ञा दिवस आयोजित करें। राष्ट्र संकल्प करें कि गंगा का पुनरअवतरण होगा और विश्व की सभी नदियां अविरल बहेंगी। देष ऋषि कृषि की परम्परा की तरफ लौटेगा।

प्रत्येक हिंदी, हिंदू, हिंदुत्ववादी को नकली, ढोंगी या टोडी 'हिंदुत्व' के खिलाफ जंग का एलान करना ही होगा। गंगा माता की पवित्रता की लड़ाई जीवन तत्व की लड़ाई है – अध्यात्म और एहिक जीवन की एकात्मकता, अभिन्नता को अक्षुण्ण बनाए रखने की लड़ाई है।

इस बाजारीकरण के दौर में आईए हम भी अपने विचार और संकल्पों की गठरी उठा कर कबीर के साथ बाजार में खड़े हो जाएं :

कबीरा खड़ा बाज़ार में, लिए लुकाटी हाथ।
जो घर फुंके आपना, चले हमारे साथ।।